



ऋग्वेद मण्डल-8

ऋग्वेद मन्त्र 8.1.18

Rigveda 8.1.18

अध ज्मो अध वा दिवो बृहतो रोचनादधि।
अया वर्धस्व तन्वा गिरा ममा जाता सुक्रतो पृण॥

(अध) के ऊपर (ज्मः) भूमि (अध) के ऊपर (वा) और (दिवः) स्वर्ग (बृहतः) विस्तृत (रोचनात्) प्रकाश (अध) के ऊपर (अया) यह (वर्धस्व) वृद्धि को प्राप्त (तन्वा) शरीर (गिरा) वाणियों के साथ (मम) मेरे (जाता) उत्पन्न हुए (सुक्रतो) सभी महान् कार्यों को करते हुए (पृण) उत्तम भरपूर, संतुष्टि।

नोट :- यह मन्त्र सामवेद 52 में समान रूप से आया है।

व्याख्या :-

समस्त उत्पन्न हुआ की भलाई के लिए किसको प्रार्थना करें?
सर्वोच्च ऊर्जा, सभी महान् कार्यों को करने वाले! कृपया समस्त उत्पन्न हुआ को और हमारी सन्तानों को उत्तम रूप से भरपूर करो, संतोष प्रदान करो, जो इस बड़े हुए शरीर में हमारी प्रशंसा की वाणियों के साथ सभी महान् कार्य करते हैं, चाहे भूमि पर हों, चाहे स्वर्ग में हों और चाहे विस्तृत प्रकाश में हों।

जीवन में सार्थकता :-

परमात्मा की सर्वव्यापक गारंटी क्या है?

परमात्मा ने सर्वप्रथम ताप, प्रकाश, ऊर्जा और सभी जीवों के प्राण के लिए सूर्य को उत्पन्न किया। अतः यह ऊर्जा सभी जीवों के लिए परमात्मा की एक दिव्य गारंटी है जो पूर्वकाल में थी, वर्तमान में चल रही है और भविष्य में भी जारी रहेगी। इस प्रकार यह ऊर्जा ही सर्वमान्य गारंटी है।

सूक्ति :-

(जाता सुक्रतो पृण, ऋग्वेद मन्त्र 8.1.18, सामवेद मन्त्र 52)

सर्वोच्च ऊर्जा, सभी महान् कार्यों को करने वाले! कृपया समस्त उत्पन्न हुआ को और हमारी सन्तानों को उत्तम रूप से भरपूर करो, संतोष प्रदान करो।

R. V. 8.6.30

HOLY VEDAS STUDY AND RESEARCH PROGRAM

Download Vedic Pedia app from play store or join on Telegram app.

For any query feel free to contact on thevedicpedia@gmail.com or whatsapp 0091-9968357171



ऋग्वेद मन्त्र 8.6.30

Rigveda 8.6.30

आदित्प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिष्पश्यन्ति वासरम्।
परो यदिध्यते दिवा।।

(आत् इत्) इसके साथ (प्रत्नस्य) शाश्वत, सनातन (रेतसः) सदैव गतिशील, सर्वोच्च बल (ज्योतिः) प्रकाशित (पश्यन्ति) देखते हैं (अनेक दिव्य विद्वान्) (वासरम्) सर्वत्र उपस्थित, प्रतिक्षण (परः) अत्यन्त दूर (यत्) जो (परमात्मा) (इध्यते) चमकती है (दिवा) अन्तरिक्ष में अर्थात् द्युलोक में।

नोट :- यह मन्त्र सामवेद 20 में एक शब्द के परिवर्तन के साथ आया है। इस मन्त्र में 'दिवा' के स्थान पर सामवेद 20 में 'दिवि' शब्द का प्रयोग हुआ है। दोनों शब्दों का अर्थ समान है।

व्याख्या :-

दिव्य विद्वान् परमात्मा को सभी स्थानों पर किस प्रकार देखते हैं?

वह परमात्मा अत्यन्त दूर अन्तरिक्ष में भी चमकता है। इस वास्तविकता के कारण अनेक दिव्य विद्वान् उस परमात्मा को सदैव विचरते हुए, सर्वोच्च बल को सर्वत्र और प्रतिक्षण (प्रत्येक प्राणी और प्रत्येक अवस्था में) प्रकाशित रूप में देखते हैं अर्थात् शाश्वत, सनातन।

जीवन में सार्थकता :-

परमात्मा की सर्वविद्यमानता को किस प्रकार सिद्ध करें?

जब एक सर्वोच्च प्रकाश और चमकती हुई सत्ता अत्यन्त दूर द्युलोक, अन्तरिक्ष तथा अन्य शरीरों और अन्य सौर मण्डलों में उपस्थित हैं तथा सबका नियंत्रण करती है तो इस सर्वोच्च और सर्वमान्य लक्षण के आधार पर महान् दृष्टा उस प्रकाशवान् सर्वोच्च बल को सभी स्थानों पर देखते हैं। इससे परमात्मा की सर्वविद्यमानता सिद्ध होती है।

सूक्ति :-

(प्रत्नस्य रेतसः ज्योतिः पश्यन्ति वासरम्, ऋग्वेद मन्त्र 8.6.30, सामवेद मन्त्र 20)

अनेक दिव्य विद्वान् उस परमात्मा को सदैव विचरते हुए, सर्वोच्च बल को सर्वत्र और प्रतिक्षण (प्रत्येक प्राणी और प्रत्येक अवस्था में) प्रकाशित रूप में देखते हैं अर्थात् शाश्वत, सनातन।

HOLY VEDAS STUDY AND RESEARCH PROGRAM

Download Vedic Pedia app from play store or join on Telegram app.

For any query feel free to contact on thevedicpedia@gmail.com or whatsapp 0091-9968357171



R. V. 8.11.7

ऋग्वेद मन्त्र 8.11.7

Rigveda 8.11.7

आ ते वत्सो मनो यमत्परमाच्चित्सधस्थात् ।
अग्ने त्वांकामया गिरा ॥

(आ – यमत् से पूर्व लगाकर) (ते) आपसे (वत्सः) विशेष रूप से (मनः) मन (यमत् – आ यमत्) विस्तृत करता है (परमाच्चित्) सर्वोच्च मन (सधस्थात्) हृदय से (परमात्मा के साथ जीता है अर्थात् उच्च चेतना पर) (अग्ने) सर्वोच्च ऊर्जा, परमात्मा, ऊर्जावान, ज्ञान से प्रकाशित, शुद्ध एवं दिव्य (त्वाम्) आपका (कामया) इच्छा (गिरा) वाणी के साथ ।

नोट :- यह मन्त्र सामवेद 8 में समान रूप से आया है ।

व्याख्या :-

वाणी का दिव्य विज्ञान क्या है?

सर्वोच्च ऊर्जा, परमात्मा, ऊर्जावान, ज्ञान से प्रकाशित, शुद्ध एवं दिव्य! मैं अपनी वाणी की शक्ति के साथ आपकी वाणियों की इच्छा करता हूँ या मैं आपकी इच्छा करता हूँ, सर्वोच्च ऊर्जा, परमात्मा । क्योंकि आपके मन की ये वाणियाँ उच्च मन से विस्तृत हो जाती हैं और उन लोगों के मन से जो परमात्मा के साथ उच्च चेतना पर जीते हैं ।

जीवन में सार्थकता :-

उच्च चेतना पर जीने वाले व्यक्ति के विचार किस प्रकार फैलते हैं?

जो व्यक्ति इस चेतना के साथ जीता है कि उसकी वाणी की शक्ति परमात्मा के द्वारा दी गई ऊर्जा के कारण है, वह कभी अपनी वाणी शक्ति का दुरुपयोग नहीं करता ।

ऐसा व्यक्ति परमात्मा से ही वाणी की शक्ति की प्रार्थना करता है, क्योंकि उसे यह अनुभूति होती है कि इस चेतना के साथ उसके विचार हृदय से विस्तृत होंगे अर्थात् एक ऐसे स्थान से जहाँ वह परमात्मा की उपस्थिति को महसूस करता है और निरर्थक वार्ता नहीं करता ।

सूक्ति :-

(अग्ने त्वाम् कामया गिरा, ऋग्वेद मन्त्र 8.11.7, सामवेद 8)

सर्वोच्च ऊर्जा, परमात्मा, मैं आपकी वाणियों की इच्छा करता हूँ ।

HOLY VEDAS STUDY AND RESEARCH PROGRAM

Download Vedic Pedia app from play store or join on Telegram app.

For any query feel free to contact on thevedicpedia@gmail.com or whatsapp 0091-9968357171



R. V. 8.14.13

ऋग्वेद मन्त्र 8.14.13

Rigveda 8.14.13

अपां फेनेन नमुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः ।

विश्वा यदजयः स्पृधः ॥

(अपाम्) जलों का, कर्मों का, समुद्र की झाग का (फेनेन) बढ़ने के साथ (नमुचेः) त्याग नहीं करता (अहंकार का) (शिरः) सिर की तरफ (इन्द्रः) सूर्य, इन्द्रियों का नियंत्रक (उदवर्तयः) गर्व से बढ़ना (बादलों, कर्मों का नाश करते हुए) (विश्वा) सब (यत्) जो (अजयः) जीत (स्पृधः) प्रतियोगी, शत्रु आदि ।

नोट :- यह मन्त्र यजुर्वेद 19.71 में समान रूप से आया है ।

व्याख्या :-

सभी शत्रुओं को नष्ट या छोटा कैसे करें?

इस मन्त्र का देवता 'इन्द्र' है ।

'इन्द्र' अर्थात् सूर्य गर्व के साथ आगे बढ़ता है । उन जलों के सिर को नष्ट करने के लिए, छोटा करने के लिए जो अपने उदय होने अर्थात् बादलों या समुद्र की झाग का त्याग नहीं करते ।

'इन्द्र' अर्थात् इन्द्रियों का नियंत्रक, गर्व के साथ आगे बढ़ता है । अपने अहंकार और बढ़ते हुए कर्मों के साथ जुड़ी इच्छाओं को नष्ट करने के लिए या छोटा करने के लिए । केवल इसी प्रकार हम अपने सभी प्रतियोगियों और शत्रुओं आदि पर विजय प्राप्त कर सकते हैं ।

जीवन में सार्थकता :-

हमें इन्द्र क्यों बनना चाहिए?

हम इन्द्र कैसे बनें?

प्रत्येक व्यक्ति को इन्द्र अर्थात् इन्द्रियों का नियंत्रक अवश्य ही बनना चाहिए । अन्यथा, सम्पूर्ण जीवन इन्द्रियों के तुष्टिकरण में ही व्यर्थ हो जायेगा । परमात्मा की अनुभूति या मुक्ति आदि की तो बात ही क्या करनी या विचार ही क्या करना, इन्द्र बनें बिना तो कोई व्यक्ति भौतिक, सांसारिक मार्ग पर भी शान्त जीवन नहीं जी सकता ।

इन्द्र बनने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को एक समान विचार श्रृंखला अपनानी चाहिए कि मन का कार्य है अपने लक्ष्य तक पहुँचने के मार्ग को साफ करना न कि इन्द्रियों के पीछे भागते हुए मार्गों पर भटक जाना । बल्कि मन को शरीर रथ की सहायता करते हुए अपने गन्तव्य तक पहुँचने के लिए सभी इन्द्रियों को इस कार्य में नियुक्त करना चाहिए । मन को इन्द्रियों के नियंत्रण में नहीं रहना चाहिए । बल्कि मन को सभी इन्द्रियों के ऊपर प्रभावशाली नियंत्रण रखना चाहिए ।

ऋग्वेद मन्त्र 8.71.1

त्वं नो अग्ने महोभिः पाहि विश्वस्या अरातेः ।

उत द्विषो मर्त्यस्य ॥

HOLY VEDAS STUDY AND RESEARCH PROGRAM

Download Vedic Pedia app from play store or join on Telegram app.

For any query feel free to contact on thevedicpedia@gmail.com or whatsapp 0091-9968357171



(त्वम्) आप (नः) हमें (अग्ने) सर्वोच्च ऊर्जा, परमात्मा, प्रथम अग्रणी, ताप, अग्नि, ऊर्जा (महोभिः) महिमा के साथ, वैभव के साथ, शक्तियों के साथ (पाहि) संरक्षण (विश्वस्याः) सबसे (अरातेः) दान न देने की आदत वाले (स्वार्थी) (उत्त) और (द्विषः) द्वेष, शत्रुता (मर्त्यस्य) मरणशील की।

नोट :- यह मन्त्र ऋग्वेद 8.71.1 तथा सामवेद 6 में समान है।

व्याख्या :-

हमें अदानी तथा शत्रु व्यक्तियों से कौन बचा सकता है?

अधि भौतिक तथा अधि दैविक अर्थ :- यज्ञ की मूल शक्ति, अग्नि! आपकी महान् संगति, आपका वैभव और गौरव हमें उन लोगों से बचाता है जो दान देने की आदत नहीं रखते और जो यज्ञ नहीं करते तथा जो द्वेष और शत्रुताएँ रखते हैं।

अधि आत्मिक अर्थ :- सर्वोच्च ऊर्जा, परमात्मा, सबको यज्ञ कार्यों के लिए शक्ति देने वाले! आपकी महान् संगति, आपका वैभव, गौरव तथा आपकी शक्तियाँ हमारी उन लोगों से रक्षा करती है जो यज्ञ के मार्ग पर नहीं चलते और जो आध्यात्मिक पथ पर हमारे शत्रु बनते हैं।

जीवन में सार्थकता :-

यज्ञ किस प्रकार एक स्वाभाविक रक्षा कवच है?

यज्ञ मार्ग वाला जीवन अत्यन्त शक्तियाँ देने वाला होता है, विशेष रूप से उन लोगों को जो अपने जीवन में पूर्ण यज्ञ सम्पन्न करते हैं। यज्ञ करने वाला व्यक्ति सर्वोच्च दिव्य, परमात्मा के समान प्रतीत होने लगता है। ऐसा व्यक्ति अपने लिए नहीं जीता। वह दूसरों के लिए जीता है। अर्थात् उसके लाभार्थी उसके मार्ग पर कभी बाधा नहीं बन सकते। अपने यज्ञ कार्यों के द्वारा लाभार्थी लोगों के सूची को बढ़ाते रहो। इस प्रकार आपका यज्ञ जीवन स्वाभाविक रूप से आपके लिए सुरक्षा कवच बन जायेगा।

सूक्ति :- (त्वम् नः अग्ने महोभिः पाहि — सामवेद 6 और ऋग्वेद 8.71.1) यज्ञ की मूल शक्ति, अग्नि! आपकी महान् संगति, आपका वैभव और गौरव हमारा संरक्षण करता है।

ऋग्वेद मन्त्र 8.84.1

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम्।
अग्ने रथं न वेद्यम्॥

(प्रेष्ठम्) सर्वज्ञाता, प्रकाशवान्, अत्यन्त प्रिय (वः) आपका (हमारा) (अतिथिम्) अतिथि (पधारने वाला), बिना समय के अनुभूति के योग्य (स्तुषे) महिमा, प्रशंसा (मित्रम् इव) मित्र के समान (प्रियम्) प्रिय, प्रेम के योग्य (अग्ने) सर्वोच्च ऊर्जा, परमात्मा, प्रथम अग्रणी, ताप, अग्नि, ऊर्जा (रथम्) रथ (न) जैसे कि (वेद्यम्) स्थापित, ज्ञान देने वाला।

नोट :- यह मन्त्र ऋग्वेद 8.84.1 तथा सामवेद 5 में समान है।

HOLY VEDAS STUDY AND RESEARCH PROGRAM
Download Vedic Pedia app from play store or join on Telegram app.
For any query feel free to contact on thevedicpedia@gmail.com or whatsapp 0091-9968357171



व्याख्या :-

अतिथि कौन होता है?

अतिथियों का स्वागत कैसे करें?

अधि भौतिक अर्थ :- आपके अत्यन्त प्रिय अतिथि आपके पास बिना समय निर्धारित किये कभी भी आ सकते हैं, क्योंकि वह प्रेम करने योग्य मित्र की तरह है। आपको रथ पर उसका स्वागत करना चाहिए अर्थात् अपने घर में सभी ऊर्जाओं के साथ।

अधि दैविक अर्थ :- अग्नि को यज्ञ कुण्ड नामक रथ में स्थापित करना चाहिए और अपने लिए सबसे लाभकारी अतिथि समझना चाहिए। अग्नि की प्रशंसा एक मित्र की तरह करते हुए उससे प्रेम करो।

अधि आत्मिक अर्थ :- सर्वज्ञाता और प्रकाशमान सर्वोच्च शक्ति, परमात्मा हमारा अतिथि है। वह हमारी अनुभूति में कभी भी किसी समय आ सकता है। हमें एक प्रिय मित्र की तरह उसका महिमागान, उसकी प्रशंसा और पूजा तथा सेवा करनी चाहिए और उसे अपने हृदय रथ अर्थात् ब्रह्मरन्ध्र में स्थापित करना चाहिए।

जीवन में सार्थकता :-

क्या अतिथियों का स्वागत करना एक सामाजिक और आध्यात्मिक संस्कृति भी है?

सामाजिक संस्कृति की तरह हमें अपने मेहमानों का स्वागत करने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए। वास्तविक अतिथि वह है जो बिना समय निर्धारित किये आता है। सभी अतिथियों को एक प्रिय मित्र समझते हुए उनका महिमागान करना चाहिए। अपने गृह रथ में अपने अतिथियों को सम्मानपूर्वक स्थापित करना हमारे लिए भी सम्मान का विषय है। अतिथि भगवान की तरह होते हैं।

हमारी आध्यात्मिक यात्रा पर अन्य लोगों के साथ कार्य और व्यवहार के सभी अवसरों को हमें परमात्मा के स्वागत का समय समझना चाहिए। इसी प्रकार ध्यान-साधना के समय हमें परमात्मा का स्वागत करना चाहिए। हमें जीवन में परमात्मा का आह्वान करते हुए यह चेतना रखनी चाहिए कि कोई भी क्षण परमात्मा की अनुभूति का दिव्य क्षण हो सकता है।

कोई भी अतिथि सामाजिक स्तर पर या आध्यात्मिक स्तर पर सर्वोच्च अतिथि का स्वागत यज्ञ कार्यों से ही होना चाहिए।

सूक्ति :- (प्रेष्ठम् वः अतिथिम् — ऋग्वेद 8.84.1, सामवेद 5) आपके अत्यन्त प्रिय अतिथि आपके पास बिना समय निर्धारित किये कभी भी आ सकते हैं।

HOLY VEDAS STUDY AND RESEARCH PROGRAM

Download Vedic Pedia app from play store or join on Telegram app.

For any query feel free to contact on thevedicpedia@gmail.com or whatsapp 0091-9968357171



This file is incomplete/under construction